घाघरा घाटी की नवपाषाणिक संस्कृति

डॉ0 दिनकर कुमार*

घाघरा नदी घाटी का ऊपरी हिस्सा नेपाल की तराई वाले क्षेत्र मे आता है। इसके निचले सिरे के अन्तर्गत पूर्वी अत्तर प्रदेश का क्षेत्र आता है। यह अपनी सांस्कृतिक व ऐतिहासिक प्राचीनता, उर्वरता और महात्मा बुद्ध के कर्मस्थली होने के कारण देश–विदेश में प्रसिद्ध रहा है। निम्न घाघरा घाटी के पुरातात्विक अन्वेषण से ज्ञात होता है कि यहाँ से प्राप्त अनेक पुरास्थल नवपाषाणकालीन है जहाँ से नवपाषाणिक संस्कृति से सम्बन्धित पुरावशेष उत्खनन के पश्चात प्राप्त हुए हैं। इसी काल में मानव ने सर्वप्रथम कृषि एवं पशुपालन को प्रारम्भ किया। कृषि कार्यों मे सहायता के लिए चिकने और पॉलिशदार पाषाण उपकरणों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। मानव नें अपने रहने के लिए घास–फूस और बॉस बल्ली के मकान बनाने शुरू किये। निम्न घाघरा घाटी में जो नवपाषाणकालीन पुरास्थल प्रकाश मे आये है उनमें चिरांद (बिहार), इमलीडीह खुर्द (गोरखपुर) भूनाडीह (बलिया) लहुरादेवा (संत कबीर नगर) प्रमुख है।

चिरांद : ($25^0 45'$ उत्तरी अक्षांश, $4^0 50'$ पूर्वी देशांतर)

चिरांद उत्तरी बिहार के सारन जिले में गंगा के तट पर बसा एक छोटा गाँव है जो छपरा से 8 किलोमीटर पूर्व और घाघरा तथा गंगा के मिलन स्थल पर स्थित है। यहाँ पर अनेक ऊँचे टीले पाये गये हैं जिनके स्थल अन्वेषण से नवपाषाणिक, ताम्रपाषाणिक और लौह काल के सांस्कृतिक जमाव प्राप्त हुए हैं।[1] उत्खननों की शुरूआत डायरेक्टरेट ऑफ आर्कियोलाजी बिहार द्वारा 1963 में करायी गयी जो 1968–69 तक चलता रहा बाद में 1970–73 मे दो चरणों मे फिर उत्खनन हुए। इन उत्खननों से नवपाषाणकाल से लेकर बाद के ऐतिहासिक काल तक की एक सांस्कृतिक क्रमिकता प्रकाश में आयी। ताम्रपाषाणिक प्राचीनतम स्तरों से सादे व सफेद चित्रित काले व लाल मृद्भाण्ड पाये गये जो दन्तुरित ब्लेड, छिद्रक अति लघु पाषाण उपकरण भी यहाँ से प्राप्त हुए हैं।[2] कुछ ज्यामितीय उपकरणों भी लघु पाषाण उकरणों मे सम्मिलित है। उत्खनित स्थल से खोजे गये बड़ी संख्या मे मिले विशिष्ट फलकों और कोरों से पता चलता है कि चिरांद से बहुत दूर नहीं बहने वाली सोन नदी के सतह से इनके कच्चे माल को एकत्रित किया गया है और इस प्रकार की वस्तुएँ अभी भी नदी में मिलती हैं।[3]

घाघरा घाटी के नवपाषाणिक स्थलों की एक उल्लेखनीय विशेषता इस स्थल से मिले हड्डी के उपकरण हैं। इस स्थल से मिले हड्डी और श्रृंगो के उपकरणों की संख्या 400 से कम नहीं है और ये प्रस्तर उपकरणों की प्रतिलिपि प्रतीत होती है। सिन्हा ने इस स्थल से मिले करीब 150 उपकरणों का विश्लेषण प्रकाशित किया है और इनके कार्यात्मक उपयोग के आधार पर उन्होंने इसे चिसेल, वर्नीशर, बारशेल्ट, हथौड़ा, वेज, स्क्रेपर, साफ्ट स्ट्रेटनर, बोरर, सूआ, सुई, फाइल, बाणाग्र, ड्रील, भाले का अग्रभाग, तश्तरी, साकेट कमपास की तरह का यंत्र और चूड़ी कंघे तथा माले की तरह के आभूषणों के रूप में वर्गीकृत किया है।[4] ऐसा प्रतीत होता है कि चिरांद में मत्स्य आखेट मोटे सुई से सिले गये जालों और जाल को डुबाने के लिए सांड़ के कंधे की हड्डी के प्रयोग द्वारा होता था।[5]

जहाँ तक बर्तन उद्योग का प्रश्न है चिरांद इस उद्योग के मामले में पर्याप्त उन्नत प्रतीत होता है। यहाँ लाल मृदभाण्ड, भूरे मृदभाण्ड, काले मृदभाण्ड और काले व लाल मृदभाण्ड के रूप में चार बर्तन उद्योगों की पहचान की गयी है। ये सभी बर्तन बड़े पैमाने पर हस्त निर्मित है यद्यपि कुछ उपकरणों का

* पोस्ट डॉक्टोरल फेलो, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

निर्माण चाक पर हुआ लगता है।[6] चिरांद के नवपाषाणिक बर्तनों की एक उल्लेखनीय विशेषता भूरे मृदभाण्डों, लाल मृदभाण्डों और काले व लाल मृद्भाण्डों के बर्तनों पर पकाने के बाद की गयी लाल गेरू से चित्रकारी है। यह चित्रकारी मुख्य रूप से बर्तन के किनारे वाले भाग पर की गयी है। चित्रण अभिप्रायों मे एक दूसरे को आर–पार काटती रेखायें, संकेन्द्रित वृत्त और लहरदार रेखायें सम्मिलित हैं।

चिरांद के नवपाषाणिक निवासी करीब दो मीटर व्यास वाले अर्द्धवृत्ताकार या वृत्ताकार झोपड़ियों मे रहते थे जिनमें मिट्टी से प्लास्टर किये गये दीवाल और घास–फूस के छत होते थे। चिरांद की अर्थव्यवस्था प्रारम्भिक कृषि और पशु आखेटन पर आधारित थी। जले हुए गेहूँ, चावल व मूँग के अवशेष पाये गये हैं जो यह दिखाते हैं कि निवासियों को ग्रीष्म व शरद फसलों को उगाने का ज्ञान था।

भूनाडीह : (26°1′40′′ उत्तरी अक्षांश, 83°46′12′′ पूर्वी देशान्तर)

यह पुरास्थल बाँसडीह तहसील के जावाचट्टी से 2 किलोमीटर पूर्व मे बहेरा नाले के दक्षिणी किनारे पर स्थित है जो कि घाघरा की एक छोटी, किन्तु महत्वपूर्ण, सहायक नदी है। यह बलिया–सिकन्दरपुर मार्ग पर बलिया से लगभग 28 किलोमीटर पर है। इसका मुख्य उत्खनन सन् 1996 ई. में किया गया और लगभग 2×2 मीटर के 14 खाइयों में खुदाई की गयी। यहाँ से डोरीदार छाप वाले लाल मृदभाण्ड पाये गये हैं[7]

सबसे प्रारम्भिक काल को मृदभाण्डों के अवशेषों के अनुसार दो उपकालों में बाँटा जा सकता है। उपकाल 1ए में डोरीछाप लाल मृदभाण्ड और सादे लाल मृदभाण्ड शामिल हैं जिनकी तुलना इमलीडीह खुर्द के पूर्व नरहन संस्कृति के अवशेष से की जा सकती है । इनके मुख्य आकारों में कटोरे व तशले प्रमुख हैं फिर भी टोंटीदार जार एक विशेष आकृति है। इस तरह के कुछ अवशेष बैना[8] के उत्खनन से भी मिले हैं। एक अन्य आकृति बाहर की ओर फैले हुए किनारे और उठे हुए आधार वाले तसले की है जिसकी तुलना इमलीडीह खुर्द से की जा सकती है[9]। अन्य छोटी प्राप्तियों मे कुछ मनके व मृण्मूर्तियाँ और मृदभाण्डों के कुछ टुकड़े मिले हैं। सीमित उत्खनन के कारण कोई संरचनात्मक अवशेष नहीं प्राप्त हुआ है। फिर भी जली हुई मिट्टी और गड्ढों के निशान, मिट्टी और घास–फूस वाली झोपड़ियों का होने का पता चलता है उपकाल–1बी डोरीछाप मृदभाण्ड एवं नरहन सभ्यता के बीच एक कड़ी को दर्शाता है। इस काल की संरचनात्मक गतिविधियाँ लगभग 1ए जैसी ही है। इस काल के प्रमुख अवशेषों में डोरीछाप, काले व लाल, काले चिकने मृद्भाण्ड और लाल मृदभाण्ड हैं जो की प्रायः घाघरा के उत्तर में स्थित सभी उत्खनन क्षेत्रों से प्राप्त हुए हैं[10]यहाँ की प्रमुख आकृतियों में काले एवं लाल मृदभाण्ड के कटोरे व आधार वाली तश्तरियाँ, काले चिकने मृद्भाण्ड के बीकर जिन पर पकाने के बाद निशान बनाये गये हैं और कुछ रंगे हुए लाल मृद्भाण्ड के टुकड़े मिले हैं। भूनाडीह से प्राप्त कटोरों व तश्तरियों की तुलना गोरखपुर जिले के नरहन के काल–1ए से की जा सकती है।[11] अन्य छोटी प्राप्तियों मे मनके, अर्धमूल्यवान पत्थर के टुकड़े, टेराकोटा के टुकड़े, हड्डियों के टुकड़े और छोटे–छोटे मृदभाण्डों के टुकड़े हैं।

इमलीडीह–खुर्द : (26°30′30′′ उत्तरी अक्षांश, 82°12′15′′ पूर्वी देशान्तर)

यह पुरास्थल वर्तमान में एक टीले की तरह है जिसेक तीन चौथाई हिस्से पर वर्तमान में लोग रहते हैं और शेष पर कृषि की जाती है। यह टीला पूरी तरह वनस्पति विहीन है और वर्ष के आठ महीने फसल से ढका रहता है। यह उ0प्र0 के गोरखपुर–गोला सड़क मार्ग पर सीकरीगंज कस्बे के उत्तर–पश्चिम में लगभग 1.5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है और सीकरीगंज गोरखपुर से 40 किलोमीटर की दूरी पर है। यह 6 से 8 हेक्टेयर क्षेत्र में विस्तृत है। वर्तमान में इमलीडीह गाँव टीले के

पूर्व में स्थित है। सतह के उत्खनन से काले व लाल मृदभाण्ड परम्परा के कटोरे व तश्तरियाँ प्राप्त हुई हैं[12]। इस टीले के उत्खनन के फलस्वरूप त्रिस्तरीय सांस्कृतिक अनुक्रम का पता चला है जो निम्नवत है

प्रथम काल :

इमलीडीह उत्खनन से सास्कृतिक अवशेषों की 50 से 60 सेंटीमीटर मोटी एक परत प्राप्त हुई है जिसे चट्टानों के स्तर विज्ञान के अनुसार नरहन संस्कृति के ठीक पहले का माना जाता है[13]। इसलिए फिलहाल इसे नरहन–पूर्व सांस्कृतिक अवशेष कहा जा रहा है। इस संस्कृति में मुख्यतः रूक्ष लाल मृदभाण्ड मिले हैं। जिनमें से कुछ के बाहरी सतह पर डोरी की छाप मिली है इसलिए इन्हें डोरीदार मृदभाण्ड कहा गया है[14] । इसके साथ ही बाहर की ओर बारीयुक्त कलश, स्टैंडयुक्त तश्तरियाँ प्रमुख हैं[15]।

दूसरे प्रकार के बर्तनों में कलश का उल्लेख किया जा सकता है। जिसके गर्दन के ठीक नीचे से ही इसके पूरे बाहरी सतह पर डोरीदार छाप मिलती है। इस संस्कृति का तीसरा बर्तन एक सकरी गर्दन का और बिना आधार का हांडी जैसा लाल मृदभाण्ड प्राप्त हुआ है। इनमें से कुछ बर्तनों में गर्दन के ठीक नीचे जंजीर, रस्सी अथवा नोकदार चित्रों की नक्काशी की गयी है।

जलीय स्रोतों में ताजे जल में रहने वाला कछुआ, छोटी और मध्यम आकार की मछलियाँ और ताजे जल वाले घोंघे शामिल हैं।

द्वितीय काल :

इस काल में भट्टियाँ और कम से कम दो सतह वाले फर्श और कई खम्भों के चिन्ह मिले हैं। इस काल के प्रमुख मृदभाण्ड काले व लाल मृदभाण्ड हैं । काले व लाल मृदभाण्ड के अलावा द्वितीय काल में अन्य मृदभाण्ड की भी उपस्थिति है जो निम्न है–

A – काले चिकने मृदभाण्ड

B – सादे लाल मृदभाण्ड

धार्मिक व अन्य प्रयोगों के लिए प्रयुक्त होने वाली वस्तुएँ :

उत्खनन से कुछ ऐसे मृदभाण्डों के पैर व आधार मिले हैं जो शायद धार्मिक अथवा अन्य प्रयोगों में आते थे। ये प्रायः कम तपाये गये हैं और इनकी कोर काली है। इन पर मिट्टी का मोटा लेप किया गया है और इसे लाल रंग से चमकाया गया है। बाहरी सतह पर एक चिकनाई है जो अभी तक सुरक्षित है।

द्वितीय काल के जैविक अवशेषों के पालतू पशु, बकरी, भेड़, घोड़े और कुत्ते प्रमुख है। जंगली जानवरों में हिरण, चित्तिदार हिरण और बारहसिंगा प्रमुख हैं। प्रथम काल की ही भाँति यहाँ भी पशुओं के अवशेष अधिक हैं।

तृतीय काल :

इस काल के अवशेष वर्तमान कृषि के कारण टीले के इस भाग में बुरी तरह से अस्त–व्यस्त हो गये हैं। काले चिकने मृदभाण्ड इस काल में अधिक हो गये हैं। कुछ भूरे मृदभाण्ड भी मिले हैं। इसके अलावा एन.बी.पी.डब्लू. मृदभाण्ड का एक अकेला टुकड़ा मिला है

लहुरादेवा

(26°46′ उत्तरी अक्षांश, 82°57′ पूर्वी देशान्तर)

यह पुरास्थल बस्ती में बस्ती–गोरखपुर राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–28 पर भुजैनी चौराहे से लगभग 5 किमी० दक्षिण में खलीलाबाद तहसील के लहुरादेवा गाँव में स्थित है। सर्वप्रथम इसके पुरातात्विक महत्व को गोरखपुर विश्वविद्यालय के के०एन०त्रिपाठी ने समझा और एस०एन०चतुर्वेदी ने इसे प्रकाशित

किया[16]। उसके बाद बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के द्वारा इसका पुनः सर्वेक्षण किया गया था[17]। यह लगभग 6 मीटर ऊँचा तथा 250 × 150 मी0 क्षेत्र में विस्तृत है जो एक झील के द्वारा उत्तर–पश्चिम व दक्षिण से घिरा है जो वर्षा काल में पूरी तरह भर जाती है और इसका अतिरिक्त जल एक नाले द्वारा कटनहियाँ नदी मे चला जाता है।[18] लहुरादेवा में प्रायः कुंओं की खुदाई के दौरान प्राचीन वस्तुएँ मिल जाती हैं। यहाँ पर खुदाई के दौरान पाँच सभ्यताओं के क्रमिक अवशेष पाये गये हैं जो निम्नलिखित है[19]–

प्रथम काल – प्रारम्भिक कृषि काल (नव पाषाणिक काल)
द्वितीय काल – विकसित कृषि काल (ताम्र पाषाण काल)
तृतीय काल – अतिविकसित कृषि एवं प्रारम्भिक लौह काल
चतुर्थ काल – एन०बी0पी० डब्लू काल
पंचम काल – ऐतिहासिक काल

लहुरादेवा के प्रथम काल एवं द्वितीय काल नवपाषाणिक एवं ताम्रपाषाणिक हैं। क्योंकि पाषाण उपकरणों के अधिक अवशेष नहीं मिले हैं, इसलिए इन्हें प्रारम्भिक कृषि काल एवं विकसित कृषि वाला काल कहा गया है। प्रथम काल (प्रारम्भिक दृष्टि काल) को 1 A और 1 B दो उपकालों में बाँटा जा सकता है।

तथा रस्सी की तरह अन्य सजावट भी है। मुख्य पात्र प्रकारों में बाहर की ओर उभरे हुए कटोरे, बड़े आधार वाले कटोरे, छोटे कटोरे व कलश शामिल हैं।

काल प्रथम A के मृदभाण्डों में मुख्यतः लाल मृदभाण्ड और काले–और–लाल मृदभाण्ड हैं जो हाथ से और चाक से बने हैं और लगभग आधे–आधे हैं। लगभग दो तिहाई से ज्यादा की अन्दरूनी कोर काली है जबकि बाहरी भाग लाल है और इस पर चिकनी स्लिप लगायी गयी है। कुछ काले व लाल मृदभाण्ड और लाल मृदभाण्ड के दोनों सतहों पर काली व लाल स्लिप लगी है। कुछ टुकड़ों से स्लिप के साथ चमक के भी प्रमाण मिले हैं। कतिपय टुकड़ों में लाल स्लिप अत्यन्त उत्कृष्ट है। अधिकतर मृदभाण्ड अच्छी तरह से पकाये नहीं गये हैं और इनकी कोर असामान्य एवं छिद्रयुक्त है। घास–फूस भूसी मिटटी में अच्छी तरह से नहीं मिली है। काफी सारे मृदभाण्डों पर डोरी की छाप मिली है

आवासीय अवशेषों में खम्भा गाड़ने के गर्तों के निशान एवं भट्ठियों के निशान मिले हैं जो यह बताते है कि यहाँ पर झोपड़ियाँ रही होंगी। इस बात के भी सबूत मिले है कि ये लोग धान उगाते थे। यहाँ के जानवरों मे नीलगाय, मवेशी, भैंस इत्यादि शामिल हैं।

प्रथम काल 1 B के अवशेष कुछ पीलापन लिये हुए हैं। इस काल के बर्तनों में पुरानी विशेषतायें तो हैं परन्तु उनकी चमक व गुणवत्ता बढ़ गयी है। साथ ही पकाने के बाद उन पर स्लिप व चमक लगाने का चलन भी बढ़ गया है। कुछ नये प्रकार जैसे बीकर के साथ छिद्रयुक्त और पैरयुक्त बर्तन और टोंटीदार बर्तन भी प्राप्त हुए हैं[20]।

बर्तनों के अलावा अन्य अवशेषों में टेराकोटा के टुकड़े, कटे निशान युक्त जानवरों की हड्डियाँ भी मिली हैं।

द्वितीयकाल : यह ताम्रपाषाणिक काल से सम्बंधित है.

यहाँ से ताम्रपाषाणिक पुरावशेषों के अन्तर्गत जो मृदभाण्ड पाये गये हैं उनको निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं–

1. काले एवं लाल मृदभाण्ड

2. काले चिकने मृदभाण्ड
3. लाल चिकने मृदभाण्ड
4. भूरे मृदभाण्ड

पहले समूह के मृदभाण्डों को अच्छी तरह से पकाया गया है जिसमे कटोरों की प्रमुखता है। दूसरे समूह के काले चिकने मृदभाण्डों को तीन श्रेणियों मे बाँटा जा सकता है– खुरदरे, महीन एवं मध्यम।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

इण्डियन आर्कियोलॉजी : ए रिव्यू 1962–63, पृष्ठ 6।

इण्डियन आर्कियोलॉजी : ए रिव्यू 1969–70, पृष्ठ 374।

नारायण, एल0ए0, 1970 : दि नियोलिथिक सेटलमेंट ऑफ चिरांदु *द जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी,* नं0–56, पेज नं0 306।

सिन्हा, वी0पी0, 1979 : *आर्कियोलॉजी एण्ड आर्ट ऑफ इण्डिया,* सन्दीप प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ–57।

वर्मा, वी0एस0, 1971 : एक्सैवेशन्स एट चिरांद, न्यू लाइट ऑन इण्डियन नियोलिथिक काम्प्लेक्स, *पुरातत्व* नं0 4 पृष्ठ–19।

मिश्रा, विनीता, 1979 : सिरामिक इण्डस्ट्रीज ऑफ नियोलिथिक चिरांद, जर्नल ऑफ द बिहार पुराविद् परिषद्, वाल्यूम– III पृष्ठ 17–24।

सिंह, पी0, वी0 सिंह व ए0के0 सिंह, 1994–95: प्रोटोहिस्टोरिक इनवेस्टिगेशन इन बलिया, प्राग्धारा–5, पेज 21–35।

सिंह, पी0 और ए0के0 सिंह, 1994–95 : ट्रायल एक्सकैवेशन एट बैना, प्राग्धारा–6।

सिंह, पी0 1992–93 : आर्कियोलॉजिकल एक्सकैवेशन एट इमलीडीहखुर्द – 1992, प्राग्धारा नं0– 3।

सिंह, पी0 व ए0 के0 सिंह, 1997–98 ट्रायल एक्सकैवेशन एट भूनाडीह, डिस्ट्रिक्ट बलिया, प्राग्धारा नं0 8, पृष्ठ 11–20

सिंह, पी0 1994 : एक्सकैवेशन एण्ट नरहन (1984–89), बी0एच0यू0 और बी0आर0 पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली।

सिंह, पी0, 1994 : एक्सकैवेशन एट नरहन, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी एण्ड बी0आर0 पब्लि0 कारपोरेशन, दिल्ली–1994।

सिंह, पी0, ए0के0 सिंह, इन्द्रजीत सिंह, 1991–92 : ऑन द ट्रायल ऑफ नरहन कल्चर, 1990–91, 91–92 प्राग्धारा नं0–2।

सिंह, पी0, 1992–93 : आर्कियोलॉजिकल एक्सकैवेशन एट इमलीडीह खुर्द–1992, प्राग्धारा नं0–3, पेज नं0–23।

सिंह, पी0, 1992–93 : आर्कियोलॉजिकल एक्सकैवेशन एट इमलीडीह खुर्द–1992, प्राग्धारा नं0–3, पेज नं0–23।

सिंह, पी0, 1993–94 : फर्दर एक्सकैवेशन एट इमलीडीह खुर्द, प्राग्धारा नं0–4।

चतुर्वेदी, एस0एन0, 1980 : एक्सकैवेशन एट सठियाँव, फाजिलनगर, डिस्ट्रिक्ट देवरिया एण्ड एक्सप्लोरेशन इन द डिस्ट्रिक्ट ऑफ गोरखपुर एण्ड बस्ती ऑफ उत्तर प्रदेश, हिस्ट्री एण्ड आर्कियोलॉजी–1, पेज नं0 333–340।

सिंह, पी0, ए0के0 सिंह व आई0जे0 सिंह, 1990–91 : एक्सप्लोरेशन एलांग द कुवाना रिवर इन डिस्ट्रिक्ट गोरखपुर एण्ड बस्ती, प्राग्धारा नं0–1, पेज 69–82।

तिवारी, आर व बी0आर0 मणि, 1995–96 : फर्दर आर्कियोलॉजिकल इन्वेस्टिगेशन इन सरयूपार एरिया, प्राग्धारा नं0 6 पृष्ठ नं0 149–168

तिवारी, आर0, आर0के0 श्रीवास्तव और के0के0 सिंह, 2002 : एक्सकैवेशन एट लहुरादेवा, पुरातत्व नं0–32, पृष्ठ 54–62।

तिवारी, आर0 व अन्य 2002–03 : प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑफ द एक्सकैवेशन एट लहुरादेवा, डिस्ट्रिक्ट संतकबीर नगर, उत्तर प्रदेश 2001–2002, प्राग्धारा नं0 13, पृष्ठ नं0 37–68